International Journal of Sanskrit Research 2016; 2(1): 72-73

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2016; 2(1): 72-73
© 2016 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 09-11-2015
Accepted: 12-12-2015

डॉ. सरोज मेहता
व्याख्याता (संस्कृत) से.मु.मा.रा.कन्या महाविद्यालय, भीलवाड़ा, राजस्थान, भारत

Corresponding Author:
डॉ. सरोज मेहता
व्याख्याता (संस्कृत) से.मु.मा.रा.कन्या महाविद्यालय, भीलवाड़ा, राजस्थान, भारत

उपनिषद् शब्द का अर्थः विमर्श

डॉ. सरोज मेहता

प्रस्तावना

उपनिषद् विश्व की महानतम् रचनाओं में से है। इनमें भारत के ऋषियों के चिरन्तन चिन्तन का सार संगृहीत है। ये भारतीय तत्व विद्या के स्रोत हैं। उपनिषद् शब्द का वास्तविक अर्थ क्या है– इस विषय में विद्वानों में अत्यधिक विवाद दृष्टिपथ में आता है। इस सम्बन्ध में प्राच्यविद्याविदों में अत्यधिक मतभेद उपलब्ध होते हैं।

प्रो. मैक्समूलर[1] का विचार है कि ''उपनिषद्'' शब्द का अर्थ निस्सन्देह ''गोष्ठी'' रहा है। यह गोष्ठी गाँव, शहर से दूर जंगल में गुरू के इर्द–गिर्द बैठे हुए शिष्यों की मण्डली का द्योतन कराती है। जर्मन विद्वान् प्रो. डायसन का विचार है कि यह शब्द गुप्त संकेत, गुप्त नाम, गुप्त अभिप्राय, गुप्त शब्द, गुप्त मुक्ति तथा गुप्त निर्देश को सूचित करता है।[2] उनके अनुसार इन सभी के साथ गुप्तता निश्चित रूप से जुड़ी है।

विन्टरनित्ज इसका मूल तात्पर्य ''गुप्त संवाद अथवा सन्देश के लिए शिष्य का गुरू के समीप बैठना स्वीकार करते हैं, अर्थात् उनके अनुसार उपनिषद् शब्द मुख्यतः ''गुप्तसभा'' का वाचक है और गुप्तसभा के इस विचार से ही उसमें विवेचित किया गया ''गुप्त सिद्धान्त'' रूप अर्थ भी विकसित हुआ।[3] पाश्चात्य विद्वानों के मत के विपरीत प्राचीन भारतीय विद्वानों के मतों को जानना भी कम रूचिकर नहीं है। इस मत वैविध्य के सागर में उनके विचार और भी अधिक विविधता का आधान करते हैं। व्युत्पत्ति की दृष्टि से उपनिषद् शब्द की निष्पत्ति ''उप'' और ''नि'' उपसर्गपूर्वक ''सद्'' धातु में क्विप् प्रत्यय के योग से हुई है। उप सामीप्य का सूचक है और सद् धातु का अर्थ तीन प्रकार का है। (1) पहुँचना (2) समाप्त करना और (3) नष्ट करना (षदलृविशरणगत्यवसादनेषु)[4] आचार्य शंकर अपने तैत्तिरीयोपनिषद्भाष्य की भूमिका में ''उपनिषद्'' शब्द की निरूक्ति करते हुए लिखते हैं– ''उपनिषदिति विद्योच्यते तत्सेविनां गर्भजन्मजरादिविनाशाद्वा ब्रह्मणो वोपनिगमयितृत्वात् उपनिषण्णं वास्यां परं श्रेय –इति''[5] इसका तात्पर्य यह है कि ब्रह्मविद्या को ही उपनिषद् कहा गया है। क्योंकि जो लोग स्वयं को ब्रह्मज्ञान में ही समर्पित कर देते हैं, उनके गर्भ, जन्म और जरा आदि के बन्धन शिथिल हो जाते हैं, अथवा क्योंकि यह उन बन्धनों का पूर्ण विनाश कर देता है अथवा क्योंकि यह व्यक्ति (शिष्य) को ब्रह्म के समीप ले जाता है।

आचार्य शंकर के मत का लगभग अनुमोदन करते हुए से आचार्य सुरेश्वर का विचार है कि नाम की दृष्टि से उपनिषद् शब्द का एक ही तात्पर्य है – परम आत्मा का ज्ञान (अथवा ब्रह्मविद्या)। इस शब्द की साहित्यिक व्याख्या इसी का बोध कराती है। ब्रह्मविद्या से जीवात्मा अद्वितीय ब्रह्म और स्वयं में अभिन्नता को जान लेता है, तथा इससे अविद्या और उसके संगम से होने वाले परिणाम छिन्न–भिन्न हो जाते हैं, अतः यह (ब्रह्मविद्या) उपनिषद् कहलाती है।[6] आचार्य शंकर और सुरेश्वर के समान ही वासुदेव ब्रह्मगवत[7], नित्यानन्द[8], आनन्दगिरि[9] आदि भी मुख्यवृत्ति के द्वारा उपनिषद् शब्द का अभिप्राय ''ब्रह्मविद्या'' ही ग्रहण करते हैं।

इस प्रकार उपनिषद् शब्द के सम्बन्ध में आचार्यों और आधुनिक विद्वानों में इस अर्थ के सम्बन्ध में महान् मतभेद है। आधुनिक विद्वान् उपनिषद् के शाब्दिक अर्थ पर अधिक ध्यान केन्द्रित करते हैं जबकि आचार्य जन इसके तात्पर्यार्थ की तरफ हमारा ध्यान आकृष्ट करने का प्रयत्न करते हैं।

सम्प्रति यह भी जान लेना उपयोगी होगा कि स्वयं उपनिषद् ग्रन्थों का इस सम्बन्ध में क्या विचार है ? उपनिषद् ग्रन्थों में यत्र तत्र इस सम्बन्ध में विचार अभिव्यक्त किये गये हैं और वे पर्याप्त उपयोगी हैं। सामान्यतः उपनिषद् का अर्थ गुह्य किया गया दृष्टिगोचर होता है। कौषीतकि उपनिषद् (2.1) लिखता है– य एवं वेद तस्य उपनिषद् इसी प्रकार छान्दोग्य उपनिषद् (1.1.10) में भी इस सम्बन्ध में विचार दृष्टिपथ में आते हैं। यह लिखता है ''यदेव करोति श्रद्धया उपनिषदा''। इसी प्रकार नृ.उ.ता.उप. (2.4.; 3.1, 4.3) में ''उपनिषद्'' शब्द के स्थान पर इति ''रहस्यम्'' का प्रयोग क्रम से अनेक बार किया गया

है। बृहदारण्यक उपनिषद् (2.1.20) में लिखा है कि ''तस्य उपनिषद् सत्यस्य–सत्यम्'' तथा (4.2.1) में ''एताभिरूपनिषद्भिः समाहितात्मासि तथा 5.5.34 आदि में भी इसी प्रकार का रहस्यमूलक अर्थ दिया गया है। तैत्तिरीयोपनिषद् (1.3.1) अत्यन्त स्पष्ट रूप में लिखता हैः– ''संहिताया उपनिषद् व्याख्यास्याम तथा श्वेता. उप. (5.6) में लिखा है – तद् वेद गूढः उपनिषत्सुगूढम्।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट ज्ञात होता है कि उपनिषद् ग्रन्थ सामान्यतया उपनिषद् शब्द का अर्थ ''रहस्य'', ''अतिगुह्य ज्ञान'' ''गूढ़ निर्देश'' आदि करते हैं।[10]

''रहस्य'' शब्द वस्तुतः अत्यधिक महत्वपूर्ण है। इसका किसी भी प्रकार ''गोपनीय'' अर्थ में अनुवाद नहीं किया जा सकता; क्योंकि रहस्य और गूढ़ अथवा गोपनीय शब्दों के अर्थों में अन्तर है। शब्दकोश[11] में ''सीक्रेट'' अथवा ''गुप्त'' शब्द को अर्थ– ''नोट टू बी मेड नोन'' अर्थात् अन्य व्यक्तियों के समक्ष प्रकाशित नहीं करना,''टू बी केप्ट प्राइवेट''– गुप्त रखना तथा नोट टू बी एक्स्पोज'' अव्याख्यात होना बतलाया गया है। इसके विपरीत रहस्य शब्द की व्याख्या (रहसि एकान्ते भवं रहस्यम्) ''निर्जन'' अथवा एकान्त स्थान में दिये जाने वाले ज्ञान'' रूप अर्थ को प्रकट करती है।

उपनिषद् कहीं कहीं यह निर्देश देते हैं कि उनका ज्ञान गुह्य है और यह ज्ञान किसी अयोग्य पात्र को न दिया जाय (छा. उप. 3. 11.5)। इन उक्तियों के आधार पर कुछ विद्वान् इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि उपनिषदों का ज्ञान अथवा विद्या ''गोपनीय'' है। किन्तु निश्चित ही उपनिषदों के ऋषियों ने इस अभिप्राय से उपनिषदों की रचना नहीं की। उपनिषद्विद्या के द्वार समस्तजनों के लिए खुले हुए थे। कोई भी इसका अध्ययन और अध्यापन कर सकता था। व्यक्ति की प्रकृति और निष्ठा ही उसकी पात्रता के मापदण्ड थे। अनेक स्थलों पर ब्राह्मणों को परमसत्य के ज्ञान की प्राप्ति के लिए क्षत्रियों के समीप जाते हुए दर्शाया गया है।[12] इसी प्रकार क्षत्रिय भी ब्राह्मणों से ज्ञानार्जन करते हुए परिलक्षित होते हैं।[13] इसी तरह से अन्य लोग भी आत्मविषयक चिन्तन–मनन, अध्यापन आदि में रूचि रखते थे। रैक्व राजा जानश्रुतिपौत्रायण[14] को प्रसिद्ध आत्मविषयक ज्ञान प्रदान करता हुआ बताया गया है। इसके अतिरिक्त यह भी उल्लेखनीय है कि वाचक्नवी गार्गी[15] और सुलभा[16] मैत्रेयी जैसी स्त्रियाँ भी आत्मज्ञानविषयक चिन्तन–मनन, वाद–विवाद में पुरूषों से पीछे नहीं थीं। मैत्रेयी को बृहदारण्यक उपनिषद्[17] में ब्रह्मज्ञानी बताया गया है (मैत्रेयी ब्रह्मवादिनी बभूव)।

निष्कर्ष

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि उपनिषद् के अर्थ के सम्बन्ध में आधुनिक विद्वानों के मत उपनिषदों के अन्दर निहित सामग्री तथा उनके अभिप्रेत अर्थ को प्रस्तुत नहीं करते हैं। आचार्य शंकर तथा अन्य उनका अनुगमन करने वाले आचार्य यद्यपि उपनिषद् शब्द का विद्वत्तापूर्ण अर्थ प्रदान करते हैं किन्तु जहाँ तक स्वयं उपनिषदों के मत का इस सम्बन्ध में प्रश्न है, वे पूर्णरूप में सन्तुष्ट नहीं कर पाते। उपनिषद् स्वयं इस सम्बन्ध में अपने अन्दर सन्निहित ज्ञान को प्रायः ''रहस्य'' कहते हैं। वस्तु स्थिति यह है कि उपनिषद्विद्या अत्यन्त सूक्ष्म और गहन थी। यह इतनी सूक्ष्म तथा गहन थी कि जनसम्पर्क के मध्य इसका चिन्तन, मनन, शिक्षण संभव नहीं था। इसके लिए एकान्त स्थान की आवश्यकता थी। उपनिषदों में प्रयुक्त ''रहस्य'' शब्द इसी तथ्य की ओर संकेत करता है।

सन्दर्भ

1. सेक्रेड बुक्स ऑफ द ईस्ट वोल्यूम 1, पार्ट–1, पृ. 80–81
2. फिलोसोफी ऑफ द उपनिषद्स, पृ. 15
3. हिस्ट्री ऑफ इण्डियन लिट्रेचर, पृ. 211
4. पाणिनिकृत धातुपाठ 1.8.64
5. और भी द्रष्टव्य– शांकर भाष्य कठोपनिषद्, प्रस्तावना
6. सुरेश्वराचार्य– सम्बन्धवार्तिक, वार्तिक सं. 3–7,
7. उपनिषद् भाष्य प्रस्तावना – उपनिषच्छब्देन मुख्यया वृत्या ब्रह्म–विद्यैव वाच्या
8. उपनिषद् भाष्य प्रस्तावना – उपनिषच्छब्देन तु मुख्यया वृत्या ब्रह्म–विद्यैव वाच्या
9. शास्त्रप्रकाशिका, सुरेश्वर के वार्तिक पर, 3–7
10. यह धातव्य है कि उपनिषदों के अतिरिक्त अन्य ग्रन्थों में ''उपनिषद्'' शब्द का अभिप्राय सर्वथा भिन्न अर्थों में प्रस्तुत किया गया है। कौटिल्य, अर्थशास्त्र, अध्याय–14 तथा वात्स्यायन, कामसूत्र, अध्याय–7.
11. द्र. कन्साइज ओक्सफोर्ड डिक्शनरी
12. बृहदा. उप. 6.2.1. तथा आगे, 6.2.8; छा. उप. 5.3.7; 5.3.1. तथा आगे; बृहदा. उप. 2.1.1. तथा आग; केन उप, 4.1.
13. बृहदा. उप. 4.1.1.; 4.2.1. तथा आगे ; प्र. उप. 6.1. तै. उप. 3. 1.1., 3.2.1, 4.1., 5.1., 6.1
14. छा. उप. 4.1.1 तथा आगे
15. बृहदा. उप. 3.6.; 3.8
16. वही, 2.4; 4.5
17. वही, 4.5.1